International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 14-11-2020; Accepted: 29-11-2020; Published: 14-12-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 6; 2020; Page No. 154-155

शैव धर्म एवं उसका विकास

डॉ. कविता शर्मा
संस्कृत विभाग, सह आचार्य, राजकीय महाविद्यालय, रतनगढ़ (चूरू), राजस्थान, भारत

सारांश
शैव धर्म, भारतीय संस्कृति में सनातन काल से विद्यमान है। भारतीय संस्कृति के उद्गम स्त्रोत सिन्धु सभ्यता से लेकर वैदिक, उत्तरवैदिक, महाकाव्यकाल एवं विभिन्न राजवंशों में इस धर्म की एकरूपता एवं निरन्तरता विद्यमान थी। जहां तक प्रामाणिक तथ्यों पर गौर करे तो लिंग पूजा सिंधु सभ्यता से प्रारम्भ होकर आधुनिककाल में भी वैसी ही प्रासंगिक है। शिव के विभिन्न रूपों में से उनके एक विशाल एवं तपस्वी रूप जिसमें वे हिमालय की उच्च ढालू उपत्यकाओं में कैलाश पर्वत पर महायोगी शिव व्याघ्र चर्म पर ध्यानावस्थित आसनग्रहण करते है और उनके ध्यान के द्वारा इस संस्कार की स्थिति रहती है। इस रूप में वे लम्बी जटाओं का जूट धारण किये हुए है। जिसमें अर्द्धचन्द्र संलग्न होता है, चित्रित किये जाते है और जटा जूट से पावन गंगा की धारा प्रवाहित होती है। शिव का यह स्वरूप सबसे अधिक प्रसिद्ध एवं मान्य है। इसके अतिरिक्त शिवलिंग की प्रसिद्धि भारतीय संस्कृति में 12 ज्योतिर्लिंगों के रूप में भारत में विभिन्न राज्यों में स्थापित है।

मूलशब्द: शैव धर्म, सिन्धु सभ्यता, भारतीय संस्कृति

प्रस्तावना
शिव से सम्बद्ध धर्म को शैव कहा जाता है जिसमें शिव को इष्टदेव मानकर उसकी उपासना किये जाने का विधान है। शिव के उपासक शैव कहे जाते हैं शिव तथा उससे संबंधित धर्म की प्राचीनता प्रागैतिहासिक युग तक जाती है। सैन्धव सभ्यता की खुदाई में मोहनजोदङों से एक मुद्रा पर पद्मासन में विराजमान एक योगी का चित्र मिलता है। उसके सिर पर एक त्रिशुल जैसा आभूषण एवं त्रिमुख है। प्रसिद्ध विद्वान एवं पुरातत्व विशेषज्ञ सर जॉन मार्शल ने इस देवता की पहचान ऐतिहासिककाल के शिव से स्थापित की है। अनेक स्थलों से शिवलिंग प्राप्त होने ये यह सिद्ध हो जाता है कि शैव धर्म भारतवर्ष का प्राचीनतम धर्म था। ऋग्वेद में शिव को रूद्र कहा गया है। जो अपनी उग्रता के लिए प्रसिद्ध है। जब भी शिव को क्रोध आता तब–तब वे मनुष्य जाति और पशुओं का संहार करते थे। ऋग्वैदिककाल में रूद्र की उपासना उनके क्रोध से बचने के लिए किया करते थे। वस्तुतः रूद्र में विनाशकारी और रक्षात्मक दोनों शक्तियां निमित थी। ऐसा कहा जाता है कि शिव की बात न मानने वाले मनुष्यों को वे अपने बाणों से छिन्न भिन्न कर डालते है किन्तु अपने भक्तों के प्रति उनका स्नेह बहुत ही उपकारी होता है। भक्तों की भक्ति से वे आसानी से प्रसन्न होने वाले देव है। इसलिए धर्मग्रन्थों में उन्हें महादेव अर्थात देवों के देव की संज्ञा दी गई है। शिव को प्राणियों का रक्षक एवं सम्पूर्ण संसार का स्वामी माना जाता है।
शिव के पास सहस्त्रों औषधियां थी जिनसे रोगों सो छुटकारा मिलता था। ऋग्वेद की देवमण्डली में रूद्र का स्थान विशेष महत्वपूर्ण नहीं था। किन्तु बाद की संहिताओं तथा ब्राह्मण ग्रन्थों में हम उनकी महत्ता में उत्तरोत्तर वृद्धि पाते हैं। वाजस्नेही संहिता के शतरूपद्वीप मंत्र में रूद्र में समाप्त लोकों का स्वामी बताया गया है। वे अन्न खेतों तथा वनों के अधिपति होने के साथ ही साथ चोर, डाकुओं, ठगों आदि जघन्य जीवों के स्वामी भी बताये गये है। अथर्ववेद में उन्हें भव, शर्व, पशुपति, भूपति आदि कहा गया है।
उन्हें व्राताओं का भी स्वामी कहा जाता है। रूद्र का समीकरण अग्नि सवितृ के साथ किया गया है। बाह्मण ग्रन्थों में रूद्र की गणना सर्वप्रमुख देवता के रूप में मिलती है जिसकी शक्ति से देवता तक डरते थे। उन्हें सहस्राक्ष कहा गया हैं! उनके आठ नाम बताये गये हैं–रूद्र, सर्व, उग्र, अशनि, भव, पशुपति, महादेव तथा ईशान।
इनमें से प्रथम चार में उनके उग्ररूप तथा अन्तिम चार मंगलरूप के घोतक होते है। ऐतरेय ब्राह्मण में बताया गया है कि प्रजापति ने अपनी कन्या से समागम किया जिससे कुद्र होकर देवताओं से उसे दण्डित करने का निश्चय किया। उन्होंने अपने रोद्र रूपों से भूतपति का सृजन किया जिसने प्रजापति का बध कर डाला और इस कार्य से वह पशुपति संज्ञा से विभूषित हुआ। इससे यह पता चलता है कि ब्राह्मणकाल में शैवधर्म ठोस आधार प्राप्त कर रहा था।
उपनिषद्काल में हम रूद्र की प्रतिष्ठा में और अधिक वृद्धि पाते है। श्वेताश्वतर तथा अधर्वशिरस में रूद्र की महिमा प्रतिपादन मिलता है। श्वेताश्वतर उपनिषद् रूद्र की समता परमब्रहम से स्थापित करते हुए कहता है 'जो अपनी शक्ति से संसार पर शासन करता हैं, जो प्रलय के समय प्रत्येक वस्तु के सामने विद्यमान रहता है तथा उत्पति के समय जो सभी वस्तुओं का सृजन करता है वह रूद्र है। वह स्वयं अनादि एवं अजन्मा है। अर्थवशिरस् में भी इसी प्रकार के विचार मिलते है।
महाकाव्यकाल के समय शैव धर्म ने अत्याधिक प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी। रामायणकाल में शिव न केवल उत्तरी अपितु दक्षिणी भारत के भी देवता बन गये थे। लंका में भी उनकी पूजा की जाती थी। रावण स्वयं शिवभक्त था। शिव को महादेव, शम्भु, त्र्यम्बक, भूतनाथ आदि विरूद्ध प्रदान किये गये थे। किन्तु रामायण मूलतः एक वैष्णव ग्रन्थ है। अतः यहां विष्णु को शिव की अपेक्षा अधिक महान् देवता बताया गया है। महाभारत में शिव की प्रतिष्ठा का अधिक व्यापक विवेचन मिलता है। इसके प्रारम्भिक अंशों में तो शिव महत्त्वपूर्ण देवता नहीं लगते है किन्तु बाद के अंशों में हम उनका चित्रण सर्वोच्च देवता के रूप में पाते है। द्रोणपर्व से ज्ञात होता है कि कृष्ण तथा अर्जुन शिव से पाशुपत अस्त्र प्राप्त करने के लिए हिमालय पर्वत पर जाकर उनकी आराधना करते है। वे विश्व की आत्मा बताते है। भक्ति से प्रसन्न होकर शिव अर्जुन को पाशुपतास्त्र प्रदान करते है। महाभारत में विभिन्न स्थलों पर शिव को सर्वदेव, सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान आदि

संज्ञा प्रदान की गई है तथा बताया गया है कि देवता ब्रह्मा से लेकर पिशाच तक उनकी आराधना करते है। अनुशासन पर्व में कहा गया है कि स्वयं कृष्ण ने पुत्र प्राप्त करने के निमित्त हिमालय पर्वत पर जाकर शिव की आराधना की थी तथा शिव ने प्रसन्न होकर उन्हें मनोवांच्छित फल प्राप्त करने के लिए वरदान दिया था। इस विवरण से संकेत मिलता है कि शिव सर्वोच्च देवता के रूप में मान्य है। अर्थशास्त्र से ज्ञात होता है कि मौर्यकाल में भी शिव पूजा प्रचलित थी। कौटिल्य नगर के मध्य में शिवसदन स्थापित करने का सुझाव देता है। पतंजलि के महाभाष्य से भी ज्ञात होता है कि ईसा पूर्व दूसरी सदी में शिव की मूर्ति बनाकर पूजा की जाती थी। शिव के उपासकों को शैव कहां जाता था।

गुप्तकाल में वैष्णव धर्म अधिक प्रचलित था। परन्तु धर्म की महत्ता कम नहीं हुई। उदयगिरी गुहालेख से ज्ञात होता है कि चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य का प्रधानमंत्री वीरसेन शैव था। वीरसेन ने उदयगिरी के पहाडी पर एक शैव गुफा का निर्माण करवाया था। कुमारगुप्त प्रथम के काल में करमदण्डा तथा खोह में शिवलिंग की स्थापना की गई थी। गुप्तकाल में भूमरा में शिव तथा नचनाठाकुर में पार्वती मंदिर का निर्माण कार्य हुआ था गुप्तकालीन प्रसिद्ध कवि कालिदास शिव के अनन्य उपासक थे। उन्होंने कुमारसम्भव में शिव की महिमा का गुणगान किया है। इस काल के पुराण भी शिव के माहात्म्य का प्रतिपादन करते है। गुप्तकाल के पश्चात भी शैवधर्म की उन्नति होती रही है। वर्धनकाल में भी शैव धर्म का महत्व लगातार बना रहा है। बाणभट्ट और हेनसांग दोनो ही इसका उल्लेख करते हैं। हर्षचरित में कहा गया है कि थानेश्वर नगर के प्रत्येक घर में भगवान शिव की पूजा होती थी। हेनसांग लिखता है कि वाराणसी शैव धर्म का प्रमुख केन्द्र था जहां उसके 100 मंदिर थे। यहां शिव के 10 हजार भक्त निवास करते थे। उज्जैन का महाकाल मंदिर भी पूरे देश में प्रसिद्ध था।

राजपूत काल में भी शैव धर्म समाज में लोकप्रिय था। चन्देलों ने खजुराहों का सुप्रसिद्ध कंदारिया महादेव मंदिर का निर्माण करवाया था। गुजरात के काठियावाड में स्थित सोमनाथ का शिव मंदिर विश्व प्रसिद्ध है। उत्तर भारत के साथ–साथ दक्षिण भारत में शैव धर्म की अत्यधिक उन्नति हुई। चालुक्य वंश, पल्लव वंश, राष्ट्रकूट वंश और चोल वंश के समय शिव मंदिर का निर्माण कार्य युद्धस्तर पर हुआ। कैलाश मंदिर इसका सबसे अच्छा उदाहरण है।

निष्कर्ष

इस प्रकार हम देखते है कि शिव की उपासना भारत में प्रागैतिहासिक युग से प्रारम्भ होकर अन्त तक विकसित होती चली गई। वर्तमान समय में भी शिव पूजा उत्तर और दक्षिण भारत की संस्कृति का एक महत्त्वपूर्ण स्तम्भ बन गया है। भारत के विभिन्न भागों में स्थित 12 ज्योतिर्लिंगों की स्थापना एवं प्रसिद्धि शैव धर्म का महत्त्वपूर्ण उदाहरण है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. अद्भूत भारत (ए.एल.वाशम)
2. प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति
3. भारत का इतिहास (रोमिला थापर)
4. शिवपुराण (विशेषांक)–गीताप्रेस गोरखपुर